शोध मंथन Vol. XIII No.III July-Sept. 2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.783 (SJIF)

रवीन्द्रनाथ टैगोरः मानवतावादी, अन्तर्राष्ट्रीयवादी, प्रकृति प्रेमी

प्राप्तिः 12.08.2022
स्वीकृतः 16.09.2022

65

ऐश्वर्या सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग
नवयुग कन्या महाविद्यालय
लखनऊ
ईमेलः *aishwarya.ballia@gmail.com*

सारांश

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगौर की प्रतिभा बहुमुखी थी। वे कवि होने के साथ दार्शनिक भी थे। उनका व्यापक जीवन–दर्शन, उपनिषदों, के चिन्तन एवं मनन के परिणामस्वरूप विकसित हुआ। टैगोर मानव को मानव बनाने पर जोर देते थे। शिक्षा के सभी पहलुओं उनके मानवतावादी, अन्तर्राष्ट्रीयवादी तथा प्रकृतिप्रेमी विचार परिलक्षित होते हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य शिक्षा के सभी पहलुओं पर टैगोर के विचार का अध्ययन करना है। शिक्षण–प्रक्रिया जिसके अन्तर्गत पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, विद्यालय का वातावरण एवं अनुशासन सम्मिलित है, पर टैगोर ने विशेष जोर दिया है। बाल–मन खेलना चाहता है अतः टैगोर का विश्वास था कि प्रकृति के साहित्य में खेल–खेल में बालक का सर्वांगीण विकास होगा। उनका मानना था कि हम बालक को भूगोल पढ़ाने के फेर में पड़कर उसकी पृथ्वी छीन लेते है। चारों और फैली हुई प्रकृति हमारी महान शिक्षिका है। प्रस्तुत अध्ययन के पश्चात हम टैगौर के शैक्षिक विचारों का विश्लेषण कर सकेंगे तथा आधुनिक शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन कर सकेंगें।

मुख्य बिन्दु

प्रकृति प्रेमी, मानवतावादी, विश्व बंधुत्व की भावना, समन्वयवाद, क्रिया का सिद्धांत।

प्रस्तावना

कवि, नाटककार, उपन्यासकार, राष्ट्रप्रेमी, समाजसेवी, दार्शनिक और शिक्षाशास्त्री गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर से भला कौन नहीं परिचित होगा। उन्होने जीवन के हर क्षेत्र में अपना जो मौलिक योगदान दिया है, उसका भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व ऋणी है। शिक्षा के क्षेत्र में उन्होने जो विचार प्रस्तुत किये तथा जो योगदान किया उससे शिक्षा को एक नई दिशा मिली। प्रस्तुत अध्ययन में टैगोर का संक्षिप्त जीवन परिचय देते हुए हम उनके शैक्षिक विचारों पर प्रकाश डालेगें। टैगोर ने अपने शिक्षा–दर्शन के आधार पर शिक्षा का अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण– विधि, अनुसंधान आदि के सम्बन्ध में जो विचार प्रस्तुत किये हैं उनका प्रत्येक का वर्णन अलग–अलग क्रमशः नीचे किया जायेगा।

रवीन्द्रनाथ टैगौर का विश्व–बोध दर्शन तथा शिक्षा

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनका व्यापक जीवन–दर्शन, उपनिषदों के चिन्तन एवं मनन के परिणामस्वरूप विकसित हुआ था। उपनिषदों में विवेचित विश्व–बोध की भावना को टैगोर ने आत्मसात् किया था। उन्हे प्रकृति में अनन्त की सत्ता का आभास होता है। उन्हे सम्पूर्ण जीव–जगत में वही एक सत्ता दिखायी देती है। इसीलिए मानव मात्र की एकता में उनका अनन्त विश्वास है। उन्होंने कहा– ''मानवता को पहले अधिक विस्तृत, भावुकतापूर्ण और शक्तिशाली एकता की अनुभूति करना है।'' उन्हे इस विश्व की ब्राह्य विविधताओं के बीच एकता नजर आती है और इस विश्व के अन्तराल में झांक कर वे एक आध्यात्मिक यथार्थ की अनुभूति करते है।'' उनका विश्वास है कि ईश्वर पूर्णता को प्राप्त करने की शाश्वत प्रक्रिया है।

टैगोर का सम्पूर्ण जीवन–दर्शन में मानव–करूणा को महत्वपूर्ण स्थान मिला है वे लिखते हैं ''इसके साथ ही मानव– करूणा के प्रति भी मुझ में एक विशिष्ट प्रकार की संवेदनशीलता थी। इन सभी अनुभवों की मुझे लालसा रही तथा स्वाभाविक रूप से मैं उन्हे अपने ढंग से अभिव्यक्ति देता रहा।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0–227)

टैगोर का यह मानवातावादी दर्शन उनके समस्त शैक्षिक चिन्तन में परिलक्षित होता है।

टैगोर का शिक्षा दर्शन

टैगोर स्वभाव से ही मानवतावाद और समन्वयवाद के समर्थक थें। उन्होने एकत्व और समन्वीकरण के सिद्धांत को अपने जीवन दर्शन का मूलाधार बनाया। इसी प्रकार उनके शिक्षा–दर्शन के भी चार मूलाधार हैं– प्रकृतिवाद, मानवतावाद, आदर्शवाद और अन्तर्राष्ट्रीयवाद। जिसका वर्णन क्रमशः नीचे किया गया है–

प्रकृतिवाद

आधुनिक सभ्यता जिसे टैगोर 'ईट गारे की सभ्यता' कहते हैं, कि अपेक्षा जनों में विकसित प्राचीन भारतीय सभ्यता को अधिक महत्व देते है उन्होने प्रकृति को मानव की इच्छाओं के मिलन का स्थान माना है। प्रकृति के सम्बन्ध में टैगोर की धारणाएं निम्नलिखित हैं–

- प्रकृति शिक्षा का एक शक्तिशाली माध्यम है।
- प्रकृतिवाद का आधार संसार की समस्त वस्तुओं में प्रेम एवं ऐक्य स्थापित करना है।
- प्रकृति का सम्पर्क बालक में प्रफुल्लता, चैतन्यता, क्रियाशीलता, सौन्दर्यानुभूति और स्वतंत्रता की भावनाएं उत्पन्न करता है।
- प्राकृतिक वातावरण में शिक्षा की व्यवस्था करने से बालक मानव– जीवन और प्राकृतिक जीवन की घटनाओं का परस्पर सम्बन्ध–कारण सरलता से प्राप्त कर लेगा और उसकी समाजीकरण की प्रक्रिया में सहायता मिलेगी।
- प्रकृतिवाद आध्यात्मवाद का मार्ग प्रशस्त करता है।

मानवतावाद

टैगोर का मानवतावाद में अटूट विश्वास था। वे अपने जीवन में मानवतावाद को बड़ा महत्व देते हैं। अतएव वे जीवन–पर्यन्त मानवतावादी विचारधाराओं को फैलाने का प्रयास करते रहे। मानवता को वे महान वैज्ञानिक उपलब्धियों से भी श्रेष्ठ समझते थें।

आदर्शवाद

टैगोर का शिक्षा–दर्शन आदर्शवाद से काफी प्रभावित है। उनका विश्वास है कि प्रत्येक प्राणी में ईश्वर निवास करता है और उसी की प्रेरणा से वह सारे कार्य करता है। टैगोर के अनुसार प्रत्येक मनुष्य का अपना आध्यात्मिक व्यक्तित्व होता है। उसे चाहिए कि अपने इस व्यक्तित्व का विकास स्वाभावित ढंग से प्राकृतिक वातावरण के बीच करें।

अन्तर्राष्ट्रीयवाद

टैगोर मानवता में असीमित आस्था रखते हैं। उन्होने सदैव मानव एकता की आवाज लगाई है। वे सदा यही चाहते थे कि पूर्व और पश्चिम की संस्कृतियों में एक घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो और पूर्व तथा पश्चिम की अच्छी बातों का आपस में आदान–प्रदान हो सके। इसके लिए उन्होने प्रयास भी किया। इसी परिणाम स्वरूप आज विश्वभारती एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की संस्था बन चुकी है जहां देश–विदेश के अनेक छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं।

टैगोर के शैक्षिक विचार

टैगोर के जीवन–दर्शन और शिक्षा दर्शन का अध्ययन कर लेने से उनके शैक्षिक विचार स्वतः ही स्पष्ट हो जाते हैं, किन्तु उनका क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने की दृष्टि से शिक्षा के विभिन्न पहलुओं–अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षा विधि, अनुशासन, शिक्षक शिक्षार्थी और शिक्षालय आदि पर उनके विचारों को जानना आवश्यक है–

शिक्षा का अर्थ

टैगोर ने प्रचलित शिक्षा को घृणा की दृष्टि से देखा है क्योंकि उनके विचार से प्रचलित शिक्षा बालक को स्वाभाविक विकास से वंचित कर देती है। और उन्हे प्रकृति से प्राप्त होने वाले अनुभवों से दूर कर रखती हे। यह शिक्षा बालक को दफ्तर और फैक्टरी की मशीन का एक अंग भले ही बना सकती है किन्तु उसे पूर्ण मानव बना सकने में असमर्थ है। टैगोर ने बालक को शिक्षा द्वारा पूर्ण मानव के रूप में विकसित करने पर बल देते हैं। शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करते हुए उन्होने एक पुस्तक 'पर्सनॉलिटी' में लिखा है– ''उच्चतम् शिक्षा वह है जो हमें केवल सूचना ही नहीं देती वरन् हमारे जीवन को समस्त अस्तित्वों के अनुकूल बनाती है।'' (शिक्षा के दार्शनिक आधार, डॉ0 रमाशुक्ला डॉ0 मधुरिमा सिंह 245)

शिक्षा के सिद्धांत

टैगोर के शिक्षा–सिद्धांत उनकी दार्शनिक विचारधारा से पूर्णरूपेण प्रभावित है ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

(1) एकता का सिद्धांत – टैगोर शिक्षा में एकता के सिद्धांत के प्रबल समर्थक हैं। उनके अनुसार ''वास्तव में मानव जातियों में स्वाभाविक अन्तर पाये जाते हैं जिन्हे सुरक्षित रखना है और सम्मान देना है। शिक्षा का कार्य इन अन्तरों की उपस्थिति में भी एकता की अनुभूति कराना है। विषमताओं के होते हुए भी असंयमन के बीच सत्य की खोज करना है। टैगोर के विचार में मानवता की पूर्णता के लिए शारीरिक, बौद्धिक, और आध्यात्मिक शिक्षा में एकता स्थापित करने की आवश्यकता है।

(2) स्वतंत्र विकास का सिद्धांत – टैगोर ने शिक्षा में स्वतंत्रता के सिद्धांत पर बहुत अधिक बल दिया है, किन्तु स्वतंत्रता से उनका तात्पर्य स्वेच्छाचारिता से नहीं था। वे स्वतंत्रता भी आवश्यक बंधनों से युक्त चाहते है क्योंकि असीमित स्वतंत्रता आनन्द नहीं प्रदान कर सकती। पूर्ण आनन्द व्यक्ति तभी प्राप्त कर सकता है जब वह नियम के बंधन में हो।

(3) क्रिया का सिद्धांत – पूर्ववर्ती शिक्षाशास्त्रियों की भाँति टैगोर ने भी शिक्षा में क्रिया के सिद्धांत पर बल दिया है। उनका विचार है कि क्रिया द्वारा प्राप्त शिक्षा अधिक उपयोगी और स्थायी होती हे। इसी विचार से उन्होने अपने स्कूल के प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक के कार्यक्रम में अनेक प्रकार की शारीरिक और मानसिक क्रियाओं को स्थान दिया है।

(4) अचेतन का सिद्धांत – मनोविश्लेषणवादियों की भाँति टैगोर का अचेतन मन में बहुत अधिक विश्वास है। उनका विचार है कि चेतन मन की अपेक्षा अचेतन मन अधिक क्रियाशील होता है। बालक अचेतन रूप से जीवन में काम आने वाली अनेक बातों को बिना किसी प्रयास के सहज ही सीख लेता है। पीढ़ियों से चली आ रही सांस्कृतिक परम्पराओं को अचेतन रूप से ही ग्रहण कर लेता है जिनकी अभिव्यक्ति उचित अवसर आने पर स्वतः ही हो जाती है।

(5) प्राकृतिक एवं सामाजिक शक्तियों के संतुलन का सिद्धांत (Principle of Harmony between Natural and Socila Powers)– टैगोर बालक की शिक्षा में प्राकृतिक और सामाजिक शक्तियों के संतुलन के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। उनके अनुसार शिक्षा और विकास में प्राकृतिक और सामाजिक शक्तियाँ कार्य करती हैं। अतएव इनमें संतुलन होना आवश्यक है। इनके लिए संतुलन के परिणाम स्वरूप ही बालक का पूर्ण विकास सम्भव है।

(6) आत्मानुशासन का सिद्धांत– टैगोर का विचार है कि स्वतंत्रता से बालक में आत्माभिव्यक्ति और आत्म–नियंत्रण की शक्ति आती हे। जिसका परिणाम आत्मानुशासन होता है। आत्मानुशासन में वह शक्ति है जो बालक का उचित शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास कर सकती है।

शिक्षा के आदर्श एवं उद्देश्य

टैगोर की विचारधारा में आदर्शवाद स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होता है। उनका विश्वास है कि प्रत्येक छात्र को प्रकृति की ओर से अनन्त मानसिक शक्ति उपलब्ध हुई है। जीवन की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में इस शक्ति का अल्पांश प्रयुक्त होता है और इसके बाद विपुल शक्ति अवशिष्ट रहती है, जिसका उपयोग सृजन के लिए किया जाना चाहिए। यह अतिरिक्त मानसिक शक्ति व्यक्ति को सृजन की विभिन्न दिशाओं में कार्यरत होने के लिए उत्प्रेरित करती है। शिक्षा का एक प्रमुख कार्य शिक्षार्थी की इस सृजनात्मक शक्ति का पूरा–पूरा उपयोग करना है। रवीन्द्रनाथ टैगोर का विश्वास था कि प्रत्येक बालक में एक विलक्षण प्रतिभा तथा क्षमता निहित रहती है, शिक्षा इस प्रतिभा को विकसित करती हैं प्रत्येक व्यक्ति का जन्म किसी न किसी उचित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए होता है।

टैगोर की रचनाओं में शिक्षा के उद्देश्य सम्बन्धी विचारों का संकेत मिलता है। उन्हीं विचारों के आधार पर उनके अनुसार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य कहे जा सकते हैं–

शारीरिक विकास का उद्देश्य

टैगोर का विश्वास था कि शिक्षा के लिए शरीर का स्वास्थ्य होना आवश्यक है। अतः उन्होने शिक्षा का उददेश्य शारीरिक विकास माना जाता है उनके विचार में उत्तम शारीरिक विकास के लिए यदि आवश्यक हो तो कुछ दिन के लिए अध्ययन कार्य को स्थापित किया जा सकता है। शारीरिक विकास के लिए उन्होने प्रकृति से संपर्क, खेल–कूद, व्यायाम एवं पौष्टिक भोजन आदि को आवश्यक बताया है। इसी विचार से उनके विद्यालय शांति निकेतन में इसी चीजों की पर्याप्त सुविधा दी गई है।

मानसिक विकास का उद्देश्य

टैगोर ने बालकों की शिक्षा का उद्देश्य मानसिक व बौद्धिक विकास करना बतलाया है। उनका विचार है कि बिना उपयुक्त मानसिक विकास के व्यक्ति जीवन की विभिन्न समस्याओं का समाधान नहीं खोज सकता और न तो किसी प्रकार की उन्नति कर सकता है। अतः शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति को ज्ञानवान बनाकर उसमें स्मृति तर्क, चिन्तन और कल्पना आदि मानसिक शक्तितयों का विकास करने में सफल हो सके। परन्तु मानसिक विकास के लिए उन्होने पुस्तकीय शिक्षा का घोर विरोध किया और प्रकृति तथा जीवन की प्रत्यक्ष परिस्थितियों से ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक बताया। वे लिखते हैं–

''हम बालक को भूगोल पढ़ाने के फेर में पड़कर उसकी पृथ्वी छीन लेते है तथा व्याकरण पढ़ाने के लिए उसकी सहज भाषा उससे छीन लेते है, उसकी भूख काव्य के लिए है, किन्तु उसके सम्मुख मात्र तथ्यों और तिथियों से भरे पूरे अभिलेख प्रस्तुत कर दिये जातो हैं। बालक जन्म तो लेते है जगत में, पर हम उन्हे बेजान ग्रामोफोन के जगत में ढकेल देते है।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0–229)

एक जगह और उन्होने लिखा है :

''पुस्तकों की अपेक्षा प्रत्यक्ष रूप से जीवित व्यक्ति को जानने का प्रयास करना ही शिक्षा है। यह केवल कुछ ज्ञान ही नहीं प्रदान करता वरन् इसमें जानने की शक्ति का इतना विकास हो जाता है जितना कक्षा में दिये जाने वाले व्याख्यानों द्वारा होना असम्भव है। यदि हमारी बौद्धिक क्षमता संवेग और कल्पना आदि को वास्तविकता से दूर रखा जाये तो वे दुर्बल और विकृत हो जाती है।'' (शुक्ला रमा एवं सिंह मधुरिमा, शिक्षा के दार्शनिक आधार, पृ0सं0–248)

नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य

टैगोर नैतिकता को मानव जीवन का आवश्यक अंग मानते है। वे चाहते है कि मानव जीवन का नैतिक आधार अवश्य हो। उन्होने अपनी रचना 'साधना'' के पृष्ठ 56 पर लिखा है कि ''पशु और मनुष्य में यह अन्तर है कि पशु के जीवन में नैतिकता का अभाव होता है जबकि मनुष्य के जीवन में कहीं न कही नैतिक आधार मौजूद रहता है।'' उनका विचार है कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में इसी नैतिक आधार को विकसित करना है। टैगोर आदर्शवादी विचारधारा के भी समर्थक थे। अतः उन्होने शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास करना माना है। व्यक्ति की वैयक्तिकता का विकास करना तभी सम्भव है जब वह अपने आत्म (Self) को समझ सके और परम् सत्य का ज्ञान प्राप्त कर सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए टैगोर ने आन्तरिक स्वतंत्रता, आन्तरिक शक्ति, आत्मानुशासन एवं ज्ञान आवश्यक बतलाया है। उन्होने स्वयं लिखा है– बोलपुर में स्कूल खोलने का मेरा उद्देश्य यह था कि हमारे बालक आध्यात्मिक रूप से विकसित हो जाये।'' (शुक्ला रमा एवं सिंह मधुरिमा, शिक्षा के दार्शनिक आधार, 248)

शिक्षा तथा जीवन में समन्वय स्थापित करने का उद्देश्य

टैगोर ने जीवन को केन्द्र मानकर शिक्षा देने का समर्थन किया है। अतः उनके अनुसार शिक्षा और जीवन में सामंजस्य स्थापित होना चाहिए। वे चाहते थे कि शिक्षा ऐसी हो जो बालक में जीवन की समस्याओं को हल करने की क्षमता उत्पन्न करे। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि शिक्षा तथा जीवन में एकरूपता स्थापित होनी चाहिए। टैगोर ने लिखा है– ''इस समय हमारा ध्यान

आकर्षित करने की सर्वप्रथम तथा महत्वपूर्ण समस्या–हमारी शिक्षा तथा हमारे जीवन में सामंजस्य स्थापित करने की समस्या है।''

टैगौर का विचार है कि जीवन में सामंजस्य स्थापित करने के लिए प्रकृति के साथ समरसता स्थापित करनी पड़ेगी। टैगोर ने लिखा है ''चारों ओर फैली हुई प्रकृति हमारी महान शिक्षिका है। (ओड़ एल.के0 शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0–229)

मस्तिष्क तथा आत्मा की स्वतंत्रता का उद्देश्य

टैगोर ने शिक्षा का उद्देश्य बालक के मस्तिष्क तथा आत्मा को स्वतंत्र बनाना माना है। उनके अनुसार यह स्वतंत्रता तभी मिल सकती है जब स्वतंत्र जीवन बिताया जाय और मनुष्य को सांसारिक बंधनों से मुक्त कराया जाये। यह कार्य शिक्षा द्वारा ही संभव है, ऐसा टैगोर का विचार है। टैगोर ने लिखा है– ''आत्मा पूर्ण रूप से स्वतंत्र होनी चाहिए। क्योंकि एक स्वतंत्र ही दूसरे स्वतंत्र के समकक्ष होता है। ईश्वर स्वयं चाहता है कि आत्मा स्वतंत्र रूप में उसके समीप आये और इसी ध्येय से उसने हमें स्वतंत्रता और बुद्धि प्रदान की है। (शुक्ला रमा एवं सिंह मधुरिमा, शिक्षा के दार्शनिक आधार, पृ0सं0 248)

अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास

टैगोर मानवतावादी विचारक है, उनकी मानवता में असीमित आस्था है और उन्होने मानव व एकता पर बहुत अधिक जोर दिया है। अतः उनके अनुसार शिक्षा का एक उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करना भी है। जिससे हम एक दूसरे की भावनाओं और संस्कृतियों का आदर करें तथा सम्पूर्ण मानव जाति की भलाई के लिए तत्पर रहे। उनकी जीवन पर्यन्त यही इच्छा रही कि पूर्ण और पश्चिम की संस्कृतियों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो। उन्होने इसी लक्ष्य को सामने रख कर शान्ति निकेतन की स्थापना की जो आज विश्व भारती के नाम से प्रसिद्ध है।

टैगोर के अनुसार पाठ्यक्रम

जिस प्रकार टैगोर ने औपचारिक रूप से शिक्षा के उद्देश्यों का वर्णन नहीं किया है उसी प्रकार उन्होने पाठ्यक्रम के विषय में भी कुछ औपचारिक रूप में नहीं लिखा है। किन्तु उनकी रचनाओं से पाठ्यक्रम के विषय में पता चलता है। टैगोर ने प्रचलित पाठ्यक्रम को दोषपूर्ण बतलाया क्योंकि यह बालक में भौतिकतावादिता का विकास करके उसे धनोपार्जन के योग्य बनाता है। यह पाठ्यक्रम बालक का सर्वागीण विकास करने में असमर्थ है। उनके विचार में पाठ्यक्रम बालक का सर्वागीड़ विकास करने में असमर्थ है। उनके विचार में पाठ्यक्रम का रूवरूप इतना व्यापक होना चाहिए कि वह बालक के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का समान रूप से विकास कर सके। पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों का समावेश होना चाहिए जिससे मानव जीवन के आन्तरिक (आध्यात्मिक) और बाह्य (सामाजिक) दोनों पक्षों का समन्वित विकास हो सके। टैगोर के अनुसार बालक के आन्तरिक पहलू के विकास के लिए धर्म एवं नैतिकता तथा बाह्य पहलू के विकास के लिए कला, विज्ञान और सामाजिक विषयों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने के लिए कहा। बालक समाजिक वातावरण में रहता है अतः उसकी शिक्षा में सामाजिक पाठ्यक्रम का समावेश आवश्यक है। टैगोर ने 'आत्माभिव्यक्ति (Self Expression) को भी शिक्षा का एक लक्ष्य माना है इसके लिए उन्होने बताया कि बालक संगीत, कला और दस्तकला (हस्तकला) के माध्यम से स्वयं को आसानी से व्यक्त कर सकता। अतः पाठ्यक्रम में इस विषयों का समावेश किया जाना चाहिए।

टैगोर का विश्वास ज्ञान के एकीकरण और समन्वीकरण में अधिक है। इसके लिए वे क्रिया–प्रधान पाठ्यक्रम का समर्थन करते है। उनका विचार है कि पाठ्यक्रम में धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, भाषा, गणित, विज्ञान, इतिहास, भूगोल, आदि विषयों के साथ–साथ अन्य क्रियाएं–भ्रमण, अभिनय, चित्रकला, बागवानी, हस्तकलायें, संग्रह तथा अनेक सहगामी क्रियाएं जैसे खेल–कूद, समाज–सेवा, छात्र स्वशासन आदि को महत्वूपर्ण स्थान देना चाहिए। उनके द्वारा स्थापित विश्वभारती में इसी प्रकार का पाठ्यक्रम देखने को मिलता है।

टैगोर तथा छात्र संकल्पना

रवीन्द्रनाथ टैगोर बालक को ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते है। वे कहते हैं– ''बालक अनन्त सुखों की भूमि में विहार करता था, परन्तु उसने इस पृथ्वी पर आने का निश्चय किया, क्योंकि माता की बाजुओं का आलिंगन तथा उनके होठों का चुम्बन स्वर्गीय सुख की अपेक्षा कहीं अधिक मधुर थें।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0–229)

टैगोर अपने हृदय में बालक के प्रति अनन्त प्रेम, प्रगाढ़ सहानुभूति तथा करूणा का भाव रखते थे। घर में बालक पर रखे जाने वाले कृतिम नियत्रंण तथा विद्यालय के कठोर अनुशासन के प्रति उनकी आत्मा कराह उठती है। प्रकृतिवादी रूसों के समान ही टैगोर का विश्वास है कि सामाजिक कृतिमता के सर्वहारा प्रवाह में बालक के प्राकृतिक गुण बह जाते है, और वह समाज का दिखावटी मुखौटा धारण कर लेता है। टैगोर के अनुसार बालक की सच्ची शिक्षा, उसके प्रकृत गुणों की रक्षा तथा विकास में निहित है। टैगोर चाहते हैं कि बाल्यकाल में बालक को प्रकृत के सामिध्य रहने को अवसर मिले, जिससे न केवल बालक शारीरिक अपितु मानसिक, भावात्मक एवं बौद्धिक विकास सुचारू रूप से हो सकता है। टैगोर पर प्रकृति की अमिट छाप बाल्यकाल से ही पड़ी। उनके मकान में लगा हुआ छाता उद्यान, समीपस्थ झीलें, पुराने वट–वृक्ष की झुकती डालें, ये सब इनकी चेतना को आन्दोलित करते रहे। जब अन्य बालक सारे वस्त्र, मोजे–जूते आदि पहने हुए भी ठंड खा जाते थे, तब भी उन्हे सरदी, जुकाम भी नहीं होता था। शीत ऋतु में जब ओस पड़ती होती, तब भी वे खुली छत पर लेटे रहते। उनके बाल और वस्त्र भीग जाते, परन्तु उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर न पड़ता। अपने बाल्यकाल के अनुभव के आधार पर टैगोर ने यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रकृति के साथ समरस होकर बालक के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है।

टैगोर का विश्वास है कि प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए उसके साथ समरस होना पड़ता है। जो नग्न पैरों से पृथ्वी को स्पर्श करते है, वे ही उसकी कठोरता, मृदुता, ऊँचाई, निचाई के रहस्यों से अवगत हो सकते हैं।

टैगोर लिखते है, ''चारों ओर फैली हुई प्रकृति हमारी महान शिक्षिका है। वह हमारे जीवन को सौन्दर्य और आनन्द, समरता और रंगीन भावनाओं के साँचे में ढालती है, इसके साथ ही हमें अपनी अन्तरात्मा के प्रति मनन के लिए प्रेरणा देती है।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0 229)

उपरोक्त उद्धरणों से स्पष्ट होता हे कि कवि का आग्रह बालक के प्राकृतिक एवं सहज जीवन पर है। उनके मन में बालक के प्रति सहज करूणा का भाव है, तथा माता पिता एवं शिक्षक से वे अपेक्षा करते हैं कि वे भी बालक के प्रति सहानुभूति का भाव रखें।

टैगोर तथा शिक्षक

टैगोर प्रकृति को सजीव शिक्षिका मानते है। प्रकृति मनुष्य के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। माँ के समान वह व्यक्ति का संवेगात्मक, नैतिक व आध्यात्मिक पोषण करती है। टैगोर के अनुसार हमारी महान शिक्षिका प्रकृति है जो बालक की भी शिक्षा करती है और यदि शिक्षक संवेदनशील हो तो उसके निरन्तर विकास में भी सहायता करती है। टैगोर चाहते है कि शिक्षक को नए अनुभवों को प्राप्त करने की लालसा तथा अधिकाधिक ज्ञानार्जन की वृत्ति बनाए रखनी चाहिए। टैगोर ने लिखा है, ''शिक्षक तब तक वास्तविक रूप से अध्यापन नहीं कर सकता, जब तक कि वह स्वयं निरन्तर अध्ययनशील न रहे। शिक्षक जीवन का एक प्रमुख लक्षण सतत् अध्ययनशीलता है। (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि पृ0सं0 231)

अध्यापक की अध्ययनशीलता पुस्तक अध्ययन में ही परिलक्षित नहीं होनी चाहिए, अपितु उसकी वास्तविक अध्ययनीय सामग्री तो बालक है, जिसकी प्रकृति का अध्ययन आवश्यक है। अधिकतर शिक्षकों का बालकों के प्रति जो अमनोवैज्ञानिक व्यवहार रहता है, उससे टैगोर अत्यंत दुःखी थे। उन्होने शिक्षकों को सलाह दी कि वे प्रकृति– रूपिणी शिक्षिका से यह ज्ञान ग्रहण करें कि छात्रों की शिक्षा किस प्रकार करती है? शिक्षक को बालक की सहज प्रवृत्ति, भावना, आकांक्षा, भय, जुगुप्सा आदि को सहानुभूतिपूर्वक समझने का प्रयत्न करना चाहिए।

शिक्षण प्रक्रिया

शिक्षण प्रक्रिया के तीन प्रमुख तत्व हैं– पाठ्यक्रम पाठन–विधि तथा वह शैक्षिक वातावरण, जिसमें शिक्षण प्रक्रिया चलती है। टैगोर के अनुसार शिक्षण प्रक्रिया पर सर्वाधिक प्रभाव प्राकृतिक परिवेश का पड़ता है, अतः शिक्षण–संस्था के लिए उपर्युक्त स्थान का चुनाव अत्यंत महत्व रखता है। बाल्यावस्था तथा युवावस्था के अनुभवों ने उन्हें यह प्रेरणा दी कि स्वतंत्र तथा उन्मुक्त प्रकृति के सम्पर्क में आकर नव–विकसित मस्तिष्क पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं। प्रकृति के सानिध्य में बालक का न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक एवं भावात्मक विकास भी होगा।

यही कारण था कि विश्व भारती की स्थापना नगर के कोलाहलपूर्ण जीवन से दूर शान्त व गंभीर वातावरण में की गई। टैगोर लिखते है, ''शान्ति निकेतन में जब एक बार अध्ययपन का दायित्व मैने अपने ऊपर लिया, तो मैने ईश्वर की निजी कवित्वमय भूमि को अपना सर्जनात्मक स्रोत बनाया। मैने भूमि जल और प्रकाश से सहयोग की प्रार्थना की। हम पूर्ण पोषण तभी प्राप्त कर सकते है, जब हमारा पालन भूमि, जल आकाश और वायु करें। आइए, हम उन्हें (बच्चों) को प्रातः सूर्य को अपनी स्वर्णिम किरणों से दिन का आरम्भ करते हुए तथा शाम लाली को तारों भरी रात के अन्धकार में विलीन होते हुए देखने दें। उन्हे बिजली की कड़क सुनने दें, बरसने से पहले जंगलों को घेरे हुए घने बादलों का अवलोकन करने दें।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0, 232)

प्राकृतिक वातावरण के अलावा विद्यालय का समाजिक वातावरण भी बालकों की शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उन्होने भारत की प्राचीन आश्रम व्यवस्था से प्रेरणा ग्रहण की, जहाँ मुक्त प्राकृतिक परिवेश के साथ जीवन में सादगी तथा सरलता थी। पश्चिम में आज भौतिक सुख–सुविधाओं को बढ़ाने की होड़ लगी हुई है, परन्तु भारतीय आदर्श या सादगी। कवि के अनुसार, ''दरिद्रता ही वह विद्यालय है, जिसमें मानव अपना प्रथम पाठ व सर्वोत्तम प्रशिक्षण प्राप्त करता है।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0, 232) यदि हमें जगत और जीवन के सानिध्य में आना

है, तो जीवन में सादगी अपनाना आवश्यक है। टैगोर को भय था कि अनावश्यक वस्तुओं के संचयन से शिक्षा की स्वाभाविक विधि छिन्न–भिन्न हो जायेगी।

शिक्षण–विधियों का वर्णन टैगोर ने अलग से नहीं किया तथा कहा कि पुस्तक के रूखे पृष्ठों की अपेक्षा बालक को स्वच्छन्द प्रकृति के उपकरणों द्वारा शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। पुस्तकों द्वारा बासी ज्ञान प्राप्त करने की अपेक्षा स्वानुभव द्वारा ज्ञान प्राप्त करने पर कवि बल देता है। नदी, पर्वत, खुला आकाश, पवन, मेघ, कठोर धरित्री आदि प्रकृति के सभी अंग–उपांग बालक की शिक्षा के सहज प्राकृतिक उपकरण है। टैगोर द्वारा विवेचित समन्वयवादी पाठ्यक्रम के निम्न तीन सत्र हैं–

1. प्राच्य आध्यात्मिक संस्कृति तथा पाश्चात्य विज्ञान का पाठ्यक्रम में समन्वय होना चाहिए।
2. उदार बौद्धिक एवं कलात्मक शिक्षा के साथ दक्षतापरक शारीरिक श्रमजन्य शिक्षा का समयन्वय होना चाहिए। दूसरे शब्दों में उपयोगितावाद एवं कलात्मकता के बीच समन्वय होना चाहिए।
3. धर्म–निरपेक्ष व्यावहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक नैतिक–आध्यात्मिक शिक्षा का समन्वय आवश्यक है।

उक्त सूत्रों के परिप्रेक्ष्य में यदि पाठ्यक्रम को देखा जाए तो रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपने विद्यालय में लिखना पढ़ना, गणित तथा अन्य अनुशासनपरक विषयों के साथ–साथ संगीत, चित्रकला, अन्य कलाओं तथा हस्तशिल्प को भी पाठ्यक्रम में उपयुक्त स्थान दिया है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर और अनुशासन

रूसो के समान टैगोर भी समाज–सम्मत आचरणों को बालक पर बलपूर्वक थोपना नहीं चाहते, परन्तु वे यह भी नहीं चाहते कि बालक को कोई सामाजिक आचरण सिखाया ही नहीं जाए। रूसों सामाजिक वातावरण से बालक को बचाना चाहता है, परन्तु रवि बाबु इसी में अनुशासन का रहस्य मानते है कि विद्यालय का वातावरण (भौतिक तथा समाजिक) इस प्रकार अनुकूलित और उद्दीपक बनाया जाय, जिसमें चरित्र का विकास बिना वाह्य आरोपण के स्वतः होता जाय। टैगोर ने विद्यार्थियों के विचारों, अनुभूतियों और मूल्यों को प्रत्यक्ष रूप से अनुशासित करने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि कल्पनात्मक आधार पर वातावरण और अनुभवों तक क्रियाकलापों को ऐसा रूप दिया जिसके फलस्वरूप बच्चों में अनुकूल अनुक्रिया होती है।

टैगोर लिखते हैं, ''बच्चों में प्रकृति के प्रति जो सहज अनुराग होता है और मानवीय वातावरण में पलने वाले सम्बन्धों के प्रति जो संवेदनशीलता होती है, उसे मैने अपने विद्यालय के बालकों में साहित्य, उत्सव–कार्य तथा ऐसे धार्मिक उपदेशों से जाग्रत करने का प्रयत्न किया है, जो संसार से आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने में समर्थ होता है, और जिससे सारा संसार ही अप्रत्याशित रूप से अपना घर प्रतीत होने लगता है।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, पृ0सं0, 232)

श्री रामचन्दन् के अनुसार टैगोर अनुशासन में निम्नलिखित गुणों की अपेक्षा करते थें– ''रवि बाबु चाहते थे कि बालक तथा बालिकाएं निर्भय बने, उनका मस्तिष्क खुला तथा उन्मुक्त रहे, वे आत्मनिर्भर हो, उनमें अनुसंधान और स्व–आलोचना के प्रेरक ऐसे मनोभाव हो, जिनकी जड़े भारत–भूमि में तो गहरी हो ही, परन्तु सारे विश्व में फैली हों तथा मेल, भाई–चारा और सहयोग बढ़ाने

वाले हो और भौतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति में सहायक हो।'' (ओड एल0के0, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि पृ0सं0 236)

टैगोर के अनुसार अनुशासन का सम्बन्ध हमारे जीवन से है वे लिखते हैं ''वास्तविक अनुशासन का अर्थ अपरिपक्व एवं स्वाभाविक आवेगों की अनुचित दिशा में विकास से सुरक्षा। स्वाभाविक अनुशासन की इस स्थिति में रहना छोटे बच्चों के लिए सुखदायक है। यह उनके पूर्ण विकास में सहायता करता है।'' (शुक्ला रमा एवं सिंह मधुरिमा, शिक्षा के दार्शनिक आधार, पृ0सं0 250)

इस प्रकार स्पष्ट है कि टैगोर प्रचलित दमनात्मक अनुशासन का कड़ा विरोध करते थे और उनका विश्वास स्वतंत्रता, प्रेम और सहानुभूति से उत्पन्न अनुशासन में था।

उपसंहार

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि रवीन्द्रनाथ टैगोर वर्तमान काल के महान भारतीय दार्शनिक और शिक्षाशास्त्री थें। उनके शिक्षा दर्शन का मूल सिद्धांत प्रत्येक वस्तु के साथ एकत्व की भावना है। टैगोर प्रकृति के अनन्य उपासक थे इसलिए वे बालक को ईट गारे की चहार दीवारी की अपेक्षा खुले प्राकृतिक वातावरण में शिक्षा देना चाहते थे। टैगोर मानवता में अटूट विश्वास रखते थे। अतः उनके अनुसार शिक्षा का कार्य बालक में मानवता का विकास करना है। उनकी मानवता किसी एक राष्ट्र तक ही सीमित नहीं है वरन् उसमें सम्पूर्ण विश्व आता है। टैगोर प्राचीन गुरूकुल प्रणाली में विश्वास रखते हैं। उनकी आस्था 'सादा जीवन उच्च विचार' तथा 'ब्रहमचर्य पालन' के सिद्धांत में है। शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होने कर्म संचार को महत्व दिया है। शिक्षक के सम्बन्ध में टैगोर का विचार है कि उसे सदा ज्ञान की खोज में लगा रहने वाला तथा अच्छा पथ प्रदर्शक होना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में उनकी सबसे बड़ी देन 'विश्व भारती है जिसमें उनके समस्त शैक्षिक विचारों की झलक दिखलाई पड़ती है।

सन्दर्भ

1. शुक्ला, रमा., सिंह, मधुरिमा. शिक्षा के दार्शनिक आधार. (तृतीय नवीनतम संस्करण) आलोक प्रकाशनः इलाहाबाद।
2. माथुर, एस0एस0. (2007–08). शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार. अग्रवाल पब्लिकेशन्सः आगरा।
3. पाल, एस0के0., गुप्त, लक्ष्मी नारायण., मोहन, मदन. (2008–09). शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार. न्यू कैलाश प्रकाशनः इलाहाबाद।
4. जायसवाल, सीताराम. (2020). शिक्षा के दार्शनिक आधार. प्रकाशन केन्द्रः लखनऊ।
5. ओड़, लक्ष्मीलाल के. (2010). शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः जयपुर।
6. गुप्त, लक्ष्मी नारायण., मोहन, मदन. (2009). शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार. कैलाश प्रकाशनः इलाहाबाद।
7. पाल, एम0के0., गुप्त, लक्ष्मी नारायण., मोहन, मदन. (1994). शिक्षा दर्शन. कैलाश प्रकाशनः इलाहबाद।

8. सारस्वत, मालती., मोहन, मदन. (2000). भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं समस्याएं. कैलाश प्रकाशनः इलाहाबाद।
9. एन0सी0एफ0. (2005). राश्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा. राश्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिशदः नई दिल्ली।
10. गुप्ता, एस0पी0. (2018). मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा. शारदा पुस्तक भवनः इलाहाबाद।
11. पाण्डेय, कामता प्रसाद. (2005). शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजिक आधार. विश्वविद्यालय प्रकाशनः वाराणसी।
12. मालवीय राजीव एवं विजिटिंग फैकेल्टी, चर. (2012). शिक्षा के मूल सिद्धांत. शारदा पुस्तक भवनः इलाहाबाद।
13. Bhola, P. (2018). Education and Society. Laxmi Narain Agarwal: Agra.
14. Shodhganga.inflibnet.ac.in.
15. https://him.wikipedia.org.